दुर्लभ होता जल हमारा

डा. अचिन्त्य
सह-प्राध्यापक, सिविल इंजिनियरिंग विभाग
मुजफ्फरपुर इंस्टिच्यूट ऑफ टेक्नॉलोजी,
पोस्ट - एम.आई.टी., मुजफ्फरपुर, बिहार - 842003.

इक्कीसवीं सदी के शुभारंभ के साथ हम एक नई सदी में ही नहीं, नए सहस्त्राब्दि में प्रवेश कर गये हैं। नये युग का स्वागत मानव अनादि-काल से करता रहा है, क्योंकि इसके साथ पुरानी परम्परायें बदलतीं हैं और विधाता विभिन्न विधियों से अपनी इच्छाएं पूरी करता है। बीसवीं सदी के सन्दर्भ में देखें तो उसमें दो विश्वयुद्ध हुए, कई छोटी-मोटी लड़ाईयाँ तो होती ही रहीं। यदि उसकी विधायक उपलब्धियों को देखें तो कई नए आविष्कार हुए, मनुष्य ने अपनी शक्तियों में आश्चर्यजनक वृद्धि की। अन्तरिक्ष की यात्रा और एवरेस्ट पर आरोहण भी इसी सदी में हुआ। एशिया और अफ्रिका के कई देशों ने विदेशी सत्ता के जुए को उतार कर फेंका। पश्चिम में पनपने वाले अधिनायकवाद का जर्मनी, इटली और सोवियत संघ में खात्मा हुआ। ब्रिटिश-शासन से मुक्त होने से अहिंसा की शक्ति (भारत) उदय हुआ। सूचना-क्रांति इसी सदी में हुई।

इन सभी उपलब्धियों के बावजूद भोगवादी सभ्यता ने हमें दो ऐसे तोहफे दिए हैं, जिन्हें अस्वीकार करना भी सम्भव नहीं है। ये हैं वायु-प्रदूषण और जल-संकट। वायु-प्रदूषण के तो हम इतने आदी हो गये हैं कि हमने इसके साथ जीना सीख लिया है, भले ही इससे हमारी जीवन-शक्ति और फलतः कार्य-क्षमता क्षीण हो रही हो। परन्तु जल-संकट का तोहफा तो बहुत ही भयावह है। पानी के बिना सब कुछ सूना ही सूना लगता है।

इस धरती पर सत्तर प्रतिशत सतह पर पानी ही पानी है, लेकिन उसमें ढ़ाई प्रतिशत ही मीठा है, जबकि 97.5 प्रतिशत खारा पानी है। मीठे पानी का भी लगभग सत्तर प्रतिशत ध्रुवों और पहाड़ों की बर्फीली चोटियों और हिम-नदों में जमा पड़ा है। अर्थात, कुल मीठे पानी का मात्र एक प्रतिशत ही मानव को उपलब्ध है। धरती का चालीस प्रतिशत धरातल वर्षा की प्रतीक्षा में सूखा और अकाल-ग्रस्त रहता है और उसके हिस्से में कुल बरसात का दो प्रतिशत ही आ पाता है। पानी की कमी वाले इन क्षेत्रों में उत्तरी अफ्रीका और पश्चिमी

एशिया के एक-तिहाई देश भयंकर जल-संकट में फँस सकते हैं और सन 2005 तक दुनिया की दो - तिहाई आबादी भयंकर जलाभव से लेकर दर्मियानी जल-संकट में घिर जाएगी। 110 करोड़ से अधिक आबादी अशुद्ध जल से ही प्यास मिटाती है। इनमें से 10 प्रतिशत चीन के हैं, 19 प्रतिशत भारतीय हैं और 30 प्रतिशत अफ्रीकी हैं। दुनिया की आधी आबादी, लगभग तीन अरब लोग समुचित स्वच्छता से वंचित हैं। गंदे पानी से होने वाली बीमारियाँ प्रत्येक दिन 30,000 तक जानें ले रही हैं। सन् 2000 में 13 लाख बच्चे गंदे पानी से हुए डायरिया से मर गये। विकासशील देशों में प्रति-वर्ष 60 लाख लोग जल-जन्य और वायु - प्रदूषण से हुए रोगों से मरते हैं। पाँच वर्ष से कम उम्र की 22 लाख कलियाँ खिलने से पहले मुरझा जाती हैं इनमें से 60 प्रतिशत साँस की बीमारियों से मरते हैं, जिनमें से अधिकतर का कारण है घर के अन्दर की धूल और धुंआ।

पानी एक दुर्लभ संसाधन है और भविष्य में ज्यादा दुर्लभ होने वाला है। अमीर देशों द्वारा ईधन के अत्याधिक उपयोग के कारण वातावरण धूएं से भरता जा रहा है, जिसकी वजह से धरती गर्म हो रही है। समुद्र और पहाड़ों पर बर्फ के जो विशाल स्रोत हैं, गलते जा रहे हैं और उसकी रिचार्जिग उस अनुपात में नहीं हो रही है। अंटार्कटिका का बर्फ - भंडार भी दिन-प्रति-दिन ग्लोबल-वार्मिग के कारण घटता जा रहा है। परिणामतः नदियों में जल-प्रवाह का घटते जाना स्वाभाविक है।

जल संकट का मुख्य कारण जनंसख्या में अपार वृद्धि और जनसंख्या का नगरों में घनीभूत होना है। नगरीय सभ्यता के साथ पानी की माँग बढ़ती जाती है। इसमें घरेलू उपयोग तो घर को धोने, शौचालय एवं स्नान-घर एवं रसोई में पानी के खर्चे के अतिरिक्त सड़कों को धोने और खस-खस को गीला रखने के लिए भी होता है। अब राजधानी दिल्ली को लें। इसका विस्तार हो गया है। यमुना प्रदूषण के कारण मैली हो गई है। अब दिल्ली को पानी देने के लिए हिमालय में टिहरी गढ़वाल के लगभग सौ गांवों को विस्थापित कर भागीरथी नदी पर टिहरी बाँध बनाया जा रहा है। इस योजना के शीघ्रातिशीघ्र पूरा हो जाने का प्रस्ताव है।

सिर्फ नगर ही नहीं, गाँवो में कृषि-उत्पादन के लिये पानी का उपयोग बढ़ा है। हरित-क्रान्ति ने कृषि के क्षेत्र में औद्योगीकरण का फार्मूला लागू किया है। अधिक पानी और

रासायनिक खाद का उपयोग कर हमने पैदावार में दोगुनी-तीगुनी वृद्धि कर ली है। हमारे अन्न के भंडार तो बढ़ गये हैं, लेकिन जल के भंडार पाताल-तोड़ कुँओं को गहराते जाने के कारण खाली होते जा रहे हैं। नगरीकरण और रासायनिक खाद वाली कृषि ने जल-प्रदूषण को बढ़ावा दिया है। नगरों के गन्दे नालों के नदियों में मिलने और रासायनिक खादों के रिस कर धरती के नीचे जाने से जल विषाक्त होता जा रहा है।

जल प्रदूषण से भयभीत अभिजात्य वर्ग ने अब बोतल-बन्द पानी का उपयोग प्रारम्भ कर दिया है। तेज व्यापारियों ने इसे 'मिनरल वाटर' का नाम देकर पैसा बटोरना प्रारम्भ कर दिया है। इसमें ढुलाई और बोतल व उसके भरने का खर्चा जोड़कर शेष मुनाफा ही मुनाफा है। पीने का पानी जैसा जीवन जीने के लिए अनिवार्य आवश्यकता का व्यापार हमारे लोकतंत्र पर एक करारा तमाचा है।

भारत की राष्ट्रीय जल-संसाधन परिषद ने सबकी सहमति से देश के लिए जो जल-नीति तैयार की, वह विश्व - व्यापार संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-कोष और विश्व-बैंक के दबावों के अन्तर्गत बनाई गई लगती है। दुनिया - भर के जल-संसाधनों का बाजारीकरण करने और उसे बहुराष्ट्रीय निगमों के हाथों में सौंपने की अन्तर्राष्ट्रीय योजना का यह एक हिस्सा मात्र है। भारत तथा अन्य एशियाई समाजों में यह मान्यता रही है कि हवा और पानी प्रकृति-प्रदत्त उपहार हैं, जिन्हें खरीदां या बेचा जाना नहीं चाहिए। हमारी समाज की अवधारणा के अन्तर्गत पानी को बेचना किसी दुष्कर्म के समान माना जाता रहा है। राहगीरों को जल पिलाना हमारे यहाँ पुण्य कार्य है। आम उपयोग के लिए कुँआ खुदवाना और पनशाला चलवाना पुण्य का काम माना गया है। पानी के निजीकरण और बाजारीकरण को मान्यता देकर राष्ट्रीय जल संसाधन परिषद् ने भारतीय उपमहाद्वीप की मानवीय और परोपकारी सांस्कृतिक परम्परा का घोर अपमान किया है। रेलवे स्टेशनों और अन्य सार्वजनिक स्थलों पर मुफ्त मुहैया करायी जाने वाली पेय-जल व्यवस्था को सुनियोजित तरीके से ध्वस्त किया जा रहा है ताकि बोतल बंद पानी का बाजार बढ़ सके। 'मिनरल वाटर' के नाम से बेचे जाने वाले बोतल-बंद पानी की लागत प्रति बोतल लगभग दो-तीन रूपया है, लेकिन उसे दस से बारह रूपयों में बेचा जाता है जो ग्रामीण दूध-उत्पादक को एक लीटर दूध की मिलने वाली कीमत के बराबर है।

शहरों में पेय-जल आपूर्ति की जिम्मेदारी अंग्रेजी-राज के समय से ही नगरपालिका (म्यूनिसपैलिटी) की रही है। पर, अब दिल्ली एवं अन्य महानगरों की पानी-आपूर्ति की व्यवस्था के निजीकरण का सिलसिला शुरू कर दिया गया है। पानी के निजीकरण का मतलब है पानी का मँहगा होना। अमीरों को शायद इससे कोई अन्तर नहीं पड़ेगा, लेकिन साधारण लोग पानी के लिये तरस जायेंगे। कोई मध्य - वर्ग का व्यक्ति भी अपने घर आये अतिथि को पानी पिलाने और नहलाने में संकोच करेगा। पानी की किल्लत सबसे ज्यादा आज ग्रामीण क्षेत्रों में महसूस की जा रही है। राजस्थान के बहुत से गाँवों में तो लोगों को अपने पूरे परिवार के लिए एक घड़ा पानी भी बड़ी मुश्किल से रोजाना उपलब्ध हो पा रहा है। इधर कर्नाटक सरकार ने बड़े शहरों में जल की किल्लत को देखते हुये तीन दिनों में एक बार ही जलापूर्ति करने का फैसला किया है।

फिर जल समस्या का हल क्या है ? राजनीतिक पक्षों की सोच तो जल-समस्या के हल के लिये बाँध - जलाशय बनाने तक सीमित है। बाँध - जलाशयों की आयु सीमित होती है और बाँध जीवंत जल को मृत कर देते हैं। आस्ट्रिया के एक वैज्ञानिक शाबर्गर ने जल पर शोध कर जीवंत जल का सिद्धान्त निकाला, जिसके अनुसार पहाड़ी नदी सर्पाकार गति से चट्टानों से टकराती हुई बहने के क्रम में अपना शुद्धिकरण करती जाती है।

आज के संदर्भ में जल - प्रबंधन की जनपक्षीय और स्वदेशी नीति में इस बात का ध्यान रखना होगा कि हमारा जल-प्रबन्धन कम खर्चीला हो और उसका विकास मुख्यतः स्थानीय ज्ञान तथा स्वदेशी वित्तीय साधनों पर आधारित हो। हमें पहले पानी के उपयोग में किफायत और वितरण में समता बरतनी होगी। गाँधी जी को आनन्द - भवन में एक लोटे पानी से मुँह-हाथ धोते देखकर जवाहरलाल नेहरू जी ने कहा- "बापू ! इतनी कंजूसी क्यों? यहाँ तो गंगा-यमुना बहती हैं।" बापू ने तत्काल उत्तर दिया "यह सब केवल मेरे लिये ही तो नहीं बहती है।" हमें उन सब प्रवृत्तियों पर रोक लगाना होगी, जिनमें पानी का अनावश्यक खर्च होता है। हमें अपने घरों, रेलवे-स्टेशनों एवं अन्य सार्वजनिक स्थलों पर पानी के नल खुले छोड़ने की आदत छोड़नी पड़ेगी।

दूसरा कदम, उन उद्योगों और फसलों के विकल्प ढूढ़ने होंगे जो अधिक पानी पीती

हैं। घरों का निर्माण तो अनिवार्यतः ऐसा होना चाहिए, जिनमें छत से गिरने वाले बरसात के पानी के संग्रह के लिये बावड़ी हो। पारम्परिक तालाबों, बावड़ियों, कुँओं, इत्यादि का अधिक से अधिक निर्माण करने पर ऐसा देखा गया है कि इससे धरती के जल-स्तर में वृद्धि होती है। खेती की ऐसी प्रणाली विकसित करने की जरूरत है जिससे जहाँ पानी की कमी हो, वहाँ कम पानी में हो सकने वाली फसलें ली जायें और पानी की अधिकता वाले इलाकों में उन फसलों को उगाया जाये जिनमें पानी की जरूरत ज्यादा हो।

जल-समस्या का स्थायी हल तो वृक्ष की खेती करना है। वृक्षों को पानी की आवश्यकता कम होती है। वे वर्षा को आमंत्रित करते हैं और इसके अलावा वे वर्षा के पानी को चूस कर संचित कर लेते हैं और भूमिगत जल के स्तर को ऊँचा उठाते हैं। वृक्षों से ढ़के एक पहाड़ी ढ़ाल का पानी के बहाव पर क्या असर पड़ता है, यह भूटान की जलढ़ाका नदी में देखा जा सकता है। वहाँ पर सघन वन हैं, अतः नदी के सर्दी और वर्षा के बहाव में एक और सात का अन्तर है, जबकि टिहरी में यह अंतर बाँध-निर्माण के स्थल पर एक और सत्तर का है।

गीता में भगवान श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं, "अन्नाद भवन्ति भूतानि, पर्जन्याद् ही अन्न संभवः।" अर्थात अन्न से ही जीव की उत्पत्ति होती है और यह अन्न पर्जन्य अर्थात दूसरों के लिये जन्म लेने वाला-बादल, पर्जन्य है क्योंकि उसमें जलरूपी जीवन-शक्ति है। किन्तु, वृक्षों के कटने और जंगलो के सफाया होने से बादल भी आज बरसात भूल गये हैं। आज हमें अधिक-से-अधिक वृक्ष लगाने होंगे, जिससे उसके तीन उपकार- 'मिट्टी, पानी और वयार' की प्राप्ति हो सके। आज हमें पर्याप्त शीतल, शुद्ध और स्वादिष्ट जल पाने के लिये पर्यावरण को सुरक्षित रखना है। यद्यपि पर्यावरण -प्रदूषण के अन्तर्गत जल - प्रदूषण के अतिरिक्त वायु-प्रदूषण, मृदा-प्रदूषण, ध्वनि-प्रदूषण, भोज्य-पदार्थो का प्रदूषण एवं अन्य प्रदूषण हैं, तथापि इसमें सभी प्रदूषणों की जननी महाभोगवादी विचार-प्रदूषण शामिल है जिस पर हमें नियन्त्रण रखना होगा और अन्त में कवि शिरोमणी रहिम की इन पंक्तियों को देखें कि जल कितना अनमोल है।

" रहिमन पानी राखिए बिन पानी सब सून।
पानी गए न उबरै, मोती, मानुष, चून।।